International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 8 Issue 1 Ser. II || January 2019 || PP 97-100

जल प्रबन्धन की वैदिक दृष्टि

डॉ. वीरेन्द्र कुमार जोशी
सह आचार्य , संस्कृत
गौरी देवी राजकीय महिला महाविद्यालय
अलवर (राज.) 301001

ऋषि कहते हैं – जल ही जीवन है अर्थात जल सम्पूर्ण जीव जगत का आधार है । जो न केवल मानव अपितु जीव जन्तु , वनस्पति आदि का जीवन स्रोत है । जल एक प्रकृति प्रदत्त उपहार है । जल का नाम ही अमृत है अर्थात् जीवन रूप रस ही जल है । यह बात इन शब्दों द्वारा व्यक्त की गई है– अप्सु अमृतम् , अप्सु भेषजम्' अर्थात् जल अमृतमय है और औषधिमय है । मृत्यु से बचाने वाला जल अमृत है और शरीर के दोषों का क्षय कर शरीर की निर्दोषता सिद्ध करने वाला जल भेषज कहलाता है । यही बात निम्न मन्त्र द्वारा स्पष्ट की गई है –

आप इद्वा उ भेषजीरापो अगीचातनीः ।

आपो विश्वस्य भेषजीस्तास्त्वा मुञ्छन्तुः क्षेत्रियात ॥

अर्थात् जल निःसंदेह औषधि है , जल रोगनाशक है , जल सब रोगों की दवा है –

इमा आपः प्रभराभ्ययक्ष्या यक्ष्मनाशिनी ।

गृहानुपुसीदामि, अमृतेन सहाग्निना ॥

वैदिक मनीषा प्रारम्भ से ही जल संरक्षण के प्रति सजग दिखलाई देती है ।

जल के द्वारा खेती होती है और सब प्राणी प्रसन्न होते हैं । यह जल प्रसन्नता और सुख का मूल आधार है ।

शुद्ध जल , उसके विभिन्न स्रोत आदि का उल्लेख संस्कृत के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में भी मिलता है –

या आपो दिव्या उत व सुवन्ति खनित्रिगा उत व याः स्वञ्जाः ।

समुद्रार्था वा शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥

अर्थात् जो दिव्य जल आकाश से प्राप्त होते हैं , जो नदियों में सदा गमनशील हैं , खोदकर जो (कुएँ आदि से) निकाले जाते हैं और स्वयं स्रोतों के द्वारा प्रवाहित होकर पवित्रता विखेरते हुए समुद्र की ओर जाते हैं , वे दिव्यता युक्त जल हमारी रक्षा करें ।

यही धारणा आगे बढ़ती हुई यजुर्वेद में और फिर अथर्ववेद में दृष्टिगोचर होती है –

अद्भ्यः स्वाहा वार्भ्यः स्वाहोदकाय तिष्ठक्तीभ्यः स्वाहा

स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा कूप्याभ्यः स्वाहा सूद्याभ्यः स्वाहा

धार्याभ्यः स्वाहाऽर्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा ।

जल के प्राकृतिक स्वरूप में बाह्य तत्वों के मिश्रित हो जाने के फलस्वरूप जब विकृति आ जाती है तो वह जीव – जगत् के लिये हानिकारक हो जाता है , इसी को सामान्यतया प्रदूषित जल कहते हैं । जल जैसे ही वायु मण्डल में प्रवेश करता है उसमें अपद्रव्यतायें मिलना प्रारम्भ हो जाती हैं और धरातल के सम्पर्क में आने पर इनमें और अधिक वृद्धि हो जाती है , किन्तु ये अशुद्धियाँ कुछ सीमा तक सहनीय होती हैं अर्थात् उनका हानिकारक प्रभाव नहीं होता । परन्तु मानव अनेक प्रकार की अशुद्धियाँ इसमें समाहित करता जाता है , कुछ अनजाने में , कुछ अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु ये अशुद्धियाँ सदियों से जल में मिश्रित होती जा रही हैं , फलस्वरूप जल प्रदूषित होता जा रहा है । सामान्य रूप से जल प्रदूषण से तात्पर्य है दृ "प्राकृतिक जल में अवांछित बाह्य पदार्थ का सम्मिलित होना , जिससे जल की गुणवत्ता में अवनति आती है। " इसी को गिलपिल ने परिभाषित करते हुए लिखा है जल की रासायनिक , भौतिक और जैविक विशिष्टताओं में मुख्यतया मानवीय क्रियाओं से अवनति आ जाना ही जल प्रदूषण है। तात्पर्य यह है कि जल में जब कार्बनिक या अकार्बनिक पदार्थ मिश्रित हो जाते हैं तो उसकी भौतिक एवं जैविक संरचना परिवर्तित हो जाती है , दुर्गंध उत्पन्न हो जाती है , स्वाद बदल जाता है तथा उसमें अनेक जीवाणु उत्पन्न हो जाते हैं जो न केवल मानव अपितु

वनस्पति एवं अन्य जीव – जन्तुओं को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं । इसी प्रकार का जल 'प्रदूषित जल' कहलाता है । घरेलू अपशिष्ट जल घर की नालियों से होकर बहता है तो कागज , कपड़ा , राख , सड़े गले , पदार्थ , रोगी के उपचार में काम लिए गए कपड़े , रुई , बची हुई दवाइयां , मरे हुए छोटे कीड़े – मकोड़े , कीटनाशक आदि रास्ते में मिलते जाते हैं और यह जल झील सरोवर नदी में पहुंचकर उन्हें प्रदूषित करने का प्रमुख कारण बन जाता है । न केवल भारत अपितु अनेक विकासशील देशों में नदियों , जलाशयों आदि के किनारे शौच जाना , कपड़े धोना , नहाना आदि सामान्य माना जाता है । यह गदंगी जल में मिश्रित होकर उसे प्रदूषित करती है । यही नहीं , अपितु मृतकों को नदी में बहा देना या मृत पशुओं को भी उसमें डाल देना , जल प्रदूषण का कारण है ।

वर्तमान औद्योगिक विकास ने जहां मानव को अनेक सुविधाएं प्रदान की हैं वही प्रदूषण भी दिया है जो वायु और जल प्रदूषण के रूप में है । जनसंख्या वृद्धि भी जल प्रदूषण का एक प्रमुख कारण है । जनसंख्या बढ़ने से जल के उपयोग में अत्यधिक वृद्धि हुई है । फलस्वरूप हमारे जल स्रोतों में निरन्तर प्रदूषण की वृद्धि हो रही है जो न केवल मानव स्वास्थ्य के लिए अपितु पर्यावरण के लिए भी खतरा बन गई है । जल प्रदूषण मनुष्य , पशु , जल – जीव , जलीय वनस्पति को अनेक प्रकार से हानि पहुँचाता है । इसके फलस्वरूप पर्यावरण भी अशुद्ध होता है । इससे सामान्य जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में भी असंतुलन उत्पन्न हो जाता है ।

अन्तरिक्ष , वायु और जल की शुद्धि की ओर संस्कृत के साहित्यकारों का ही नहीं , वैदिक ऋषियों तक का ध्यान गया था । ऋग्वेदीय ऋचाओं में यह चिन्ता स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है। उनमें अन्तरिक्ष, पर्वत, नदी, तड़ाग, वन और समुद्र सभी के कल्याणकारी बने रहने की चिन्ता है–

शन्नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शन्नः

सिन्धवः शमुसन्त्वापः'

शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु'

शन्नो अहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः । ',

अर्थात् ये पर्वत ध्रुव रहें , उनकी तोड़फोड़ नहीं की जाए , जिससे ये हमारे लिए लाभकारी बने रहें । ये बड़ी – बड़ी नदियां और इनका जल हमारे लिए हितकारक रहें । हमारे वनों के वृक्ष हमें सुख और स्वास्थ्य प्रदान करते रहें । समुद्र के गहरे तलीय जल भी हमारे लिए सुख के प्रदाता हों ।

जल प्रदूषित न हो इसका बड़ा ध्यान रखा जाता था क्योंकि स्नान , तर्पण , आचमन आदि सारी शुचि क्रियाएँ जल से ही सम्पन्न होती थीं । मनुस्मृति में जल की शुद्धता के विषय में स्पष्ट निर्देश है –

नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च ।

स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्त्तप्रस्रवणेषु च।

जल में किसी प्रकार का मल फेंकना न केवल निषिद्ध था अपितु ऐसा करना दण्डनीय अपराध माना जाता था । मनु ने कहा है–

नाप्सु मूत्रं पुरीषं वाष्ठीवनं वा समुत्सृजेत् ।

अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा ॥

जल को प्रदूषित करना निन्दनीय था । तैत्तिरीय आरण्यक में भी कहा गया है –

नाप्सु मूत्रपुरीषं कुर्यात् न निष्ठीवेत्

न विवसनः स्नायात् गुह्यो वा इषोग्निः ।

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु

अर्थात् दिव्य जल हमारे लिये शान्तिदायक हों । जल के इस कल्याणकारक स्वरूप , समता अर्थात् आरोग्य प्रदान करने की क्षमता का वर्णन इस मंत्र में कई बार 'शं' कहकर किया है –

शं न आपो अन्वन्या शमु सन्त्वन्याः ।

शं न खरित्रिमा आपः शमु या कुम्भ आमृताः शिवाः सन्तु वार्षिकी ।

शुद्ध जल से ही शरीर का संरक्षण हो सकता है इसीलिये ऋषि ने इस मंत्र में कहा है––"बरुथं (संरक्षण दे) तन्वे मम" अर्थात् जल मेरे शरीर का संरक्षण करें । बरुथ का अर्थ संरक्षक कवच है याने जल कवच के समान रक्षा करने वाला है । स्वस्थ शरीर में ही बलवृद्धि हो सकती है , ऊर्जा प्राप्त हो सकती है । अतः ऋषि कहता है –

"नः ऊर्जे दधात न" अर्थात् बल के लिये पुष्ट करो । स्वस्थ और बलिष्ठ शरीर की रमणीयता , तेजस्विता बढ़ जाती है – महे रणाय चक्षसे अर्थात् जल प्रवृद्ध रमणीयता के लिये भी हैं । जल से बाह्य शुद्धि तो होती ही है , अन्तः शुद्धि भी होती हैं जिससे मनुष्य निरोग होने के साथ – साथ रमणीय भी होता है । अतः जल ही मनुष्य के सौन्दर्य का आधायक है ।

इसलिए मातृभूमि से शुद्ध जल को प्रवाहित करने की प्रार्थना की गई है –

शुद्धा न आपस्तेन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये ।

तं नि दध्यः पवित्रेण पृथिवी मोत् पुनामि ॥

अर्थात् हे मातृभूमि ! आप हमारे शरीर के लिये स्वच्छ जल प्रवाहित करें । हमारे शरीर से उतरा हुआ जल हमारा अनिष्ट करने के इच्छुकों के पास चला जाय ।

अथर्ववेद के उन्नीसवें काण्ड में ऋषि जल की महिमा का गुणगान करते हुए कहता है –

सं सं स्रवन्तु नद्यः सं वाताः सं पनगिणः ।

कठोपनिषद् के ऋषि ने तो बहुत स्पष्ट रूप से शुद्धजल की चर्चा की है और उसका स्वरूप विज्ञान सम्पन्न मुनि की अन्तरात्मा के सदृश बतलाया है –

यथोदकं शुद्धमासिक्तं तादृगेव भवति ।

एवं मुनेविजानत आत्मा भवति गौतम ॥

हिमवान् पर्वत से आनेवाले जलप्रवाह तेरे लिये सुखदायी हों , स्रोतों से बहने वाले जल – प्रवाह तेरे लिये सुखदायी हों , वर्षा से आये जलप्रवाह तेरे लिये सुखदायक हों –

शं त आपो हैमवतीः शमु तो सन्तूत्स्याः ।

शं ता ते सनिष्यन्दा आपः शमु सन्तु वर्ष्याः ॥

वैदिक ऋषि ने स्वस्थ रुप में पूर्ण आयु प्राप्त करने की अपने उत्कट अभिलाषा भी व्यक्त की है –

जीवा स्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् ।

उपजीवा स्थोपजीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् ।।

संजीवा स्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् ।

जीवात्मा स्थ सं जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् ।।

जल संरक्षण के लिए आवश्यक है कि हम लोगों में जनचेतना जागृत करें , उद्योगों को जल प्रदूषण फैलाने से रोकने के लिए कानूनी प्रावधानों को कठोरता से लागू करें , जल उपचार और मल उपचार की समुचित व्यवस्था की जाए , सरकार के साथ – साथ स्थानीय एवं समाजसेवी संस्थाएं भी इसमें सकारात्मक भूमिका निभाएं । जिससे हम अपने लिए एवं आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वच्छ और शुद्ध जल संरक्षित कर सकें ।

वैदिक ऋषि सार्वभौम हित चिन्तन से प्रेरित थे और उनकी दृष्टि अति व्यापक थी । इस प्रकार वैदिक ऋषि जल प्रदूषण के प्रति सजग थे और उसे दूर कर शुद्ध जल प्राप्ति हेतु निरन्तर प्रयत्नशील थे । जल के संरक्षण के लिए वैदिक ऋषियों की इसी चिन्तन और दृष्टि की आज परम आवश्यकता है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 – ऋकसूक्त संग्रह – व्याख्याकार – डॉ. हरिदत्तशास्त्री , डॉ. कृष्णकुमार

2 – वैदिक – सूक्त – रत्नावली – व्याख्याकार डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

3 – वैदिक साहित्य का इतिहास – डॉ. पारसनाथ द्विवेदी

4 – संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास – डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी

5 –शैक्षिक मंथन पत्रिका – जून 2018

6 – पर्यावरण अध्ययन – डॉ. एल. एन. वर्मा ,डॉ.एल. सी. खत्री , डॉ. इशाक मोहम्मद कायमखानी

7 – प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका – डॉ. रामजी उपाध्याय

8 – कठोपनिषद् – व्याख्याकार डॉ. पारसनाथ द्विवेदी

9 – ऋग्वेद

10 – यजुर्वेद

11 – अथर्ववेद

12 – कठोपनिषद् – व्याख्याकार – डॉ. श्रीकृष्ण ओझा

13 – कठोपनिषद् – व्याख्याकार – डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

14 – पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी भूगोल – डॉ. एच . एम. सक्सेना